देश-देशान्तरों में प्रचारित, सब से सस्ता, उच्च कोटि का आध्यात्मिक पत्र

सन्देश नहीं मैं स्वर्ग लोक का लाई ।
इस भूतल को ही स्वर्ग बनाने आई ॥

वार्षिक मूल्य १।) सम्पादक—श्रीराम शर्मा । एक अङ्क का ।=)

वर्ष ४] मथुरा, आश्विन सं० १९९८ सितम्बर [अङ्क ९

खरे बनिए ! चापलूसी से दूर रहिए ।

जो बात आपको सच्ची प्रतीत होती है उसे बिना किसी हिचकिचाहट के खुली जबान से कहिए अपने अन्तःकरण को कुचल कर बनावटी बातें करना, किसी के दबाव में आकर निजी विचारों को छिपाते हुए हाँ में हाँ मिलाना आपके गौरव के विपरीत है। इस प्रकार की कमजोरियाँ प्रकट करती हैं कि यह व्यक्ति आत्मिक दृष्टि से बिलकुल ही निर्बल है, डर के मारे स्पष्ट विचार तक प्रकट करने में डरता है। ऐसे कायर व्यक्ति किसी प्रकार अपना स्वार्थ साधन तो कर सकते हैं पर किसी के हृदय पर अधिकार नहीं जमा सकते। स्मरण रखिए प्रतिष्ठा की वृद्धि सचाई और ईमानदारी द्वारा होती है। आप खरे विचार प्रकट करते हैं, जो बात मन में है उसे ही कह देते हैं तो भले ही कुछ देर के लिए कोई नाराज होजावे पर क्रोध उतरने पर वह इतना तो अवश्य अनुभव करेगा कि यह व्यक्ति खरा है, अपनी आत्मा के प्रति सच्चा है। विरोधी होते हुए भी वह मन ही मन आदर करेगा।

आप किसी भी लोभ लालच के लिए अपनी आत्म स्वतंत्रता मत बेचिए, किसी भी फायदे के बदले आत्म-गौरव का गला मत कटने दीजिए। चापलूसी और कायरता से यदि कुछ लाभ होता हो तो भी उसे त्याग कर कष्ट में रहना स्वीकार कर लीजिए, क्योंकि इससे आपकी प्रतिष्ठा बढ़ेगी, आत्म गौरव को प्रोत्साहन मिलेगा। स्मरण रखिए आत्म गौरव के साथ जीने में ही जिन्दगी का सच्चा आनन्द है।
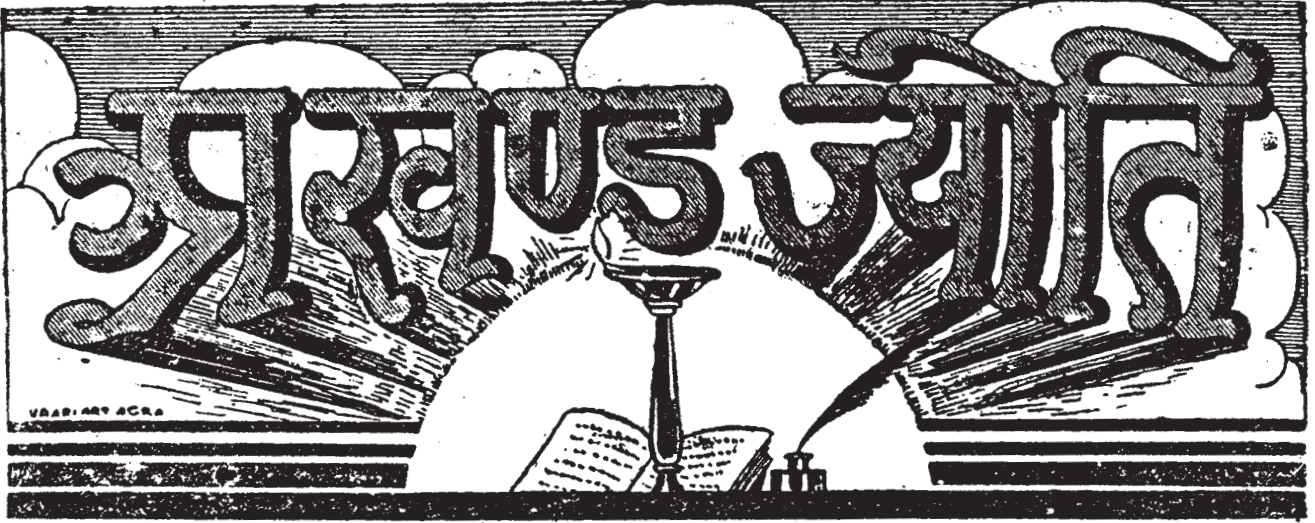
सुधा बीज बोने से पहिले, काल कूट पीना होगा।
पहिन मौत का मुकुट विश्व-हित, मानव को जीना होगा॥

वर्ष ४] सितम्बर१ सन् १९४३ ई० [अङ्क ९

नाविक से

[रचयिता—महावीर प्रसाद विद्यार्थी टेढ़ा-उन्नाव]

सहता जा नाविक! ये प्रहार, पर मुँह से निकले आह नहीं।
अधरों पर मधुर विहास लिए।
उर में अक्षय उल्लास लिए॥
भल, रोक सकेगा तुझे बीर! यह जल का प्रबल प्रवाह नहीं॥
ओ तूफ़ानो! आओ आओ।
लहरो! अम्बर से टकराओ॥
घन घटा घोर तुम घहराओ, परवाह नहीं परवाह नहीं।
तू गिरता जा तू चढ़ता जा।
तिल–तिल कर आगे बढ़ता जा॥
अपना पथ आप बनाता जा, है यहाँ कहीं भी राह नहीं॥
चट्टानों से तू लड़ता चल।
विपदाओं में तू रह अविचल॥
अपनाया तूने शूलों को फूलों की करना चाह नहीं।
सहता जा नाविक! ये प्रहार पर मुँह से निकले आह नहीं॥

अखण्ड-ज्योति

उतर स्वर्ग से भूमण्डल पर 'सत्' की अमर ज्योति आती है।
वेणु बजाती सत्य-प्रेम की, सुमधुर न्याय गान गाती है॥

मथुरा. १ सितम्बर सन् १९४३ ई०

नवयुग की आराधना !

विगत श्रावण बदी अमावस्या को अनेक शास्त्र, पुराणों, विद्वानों, विचारकों, भविष्य वक्ताओं, योगी महा-महात्माओं, तत्व दर्शियों के मतानुसार सतयुग आरम्भ होने का मुहूर्त हुआ है। जो समाचार हमारे पास आये हैं उनसे प्रतीत होता है कि उस दिन असंख्य गुप्त प्रकट आध्यात्मिक उत्सव मनाये गये, प्रचण्ड आत्म शक्ति वाले युग युगान्तरों से तपस्या करने वाली आत्माओं ने उस दिन विशेष रूप से युग परिवर्तन की समस्या पर विचार किया है और उसे शीघ्र इस भूतल पर लाने का कार्यक्रम बनाया है। अखण्ड-ज्योति के पिछले अङ्कों में भारतवर्ष के महान् योगी श्री अरविन्द घोष के कुछ प्रवचन छपे हैं उनमें प्रकट है कि युग परिवर्तन निश्चित रूप से हो रहा है और उसे निकट लाने के लिये तपस्वी आत्मायें सम्पूर्ण शक्ति के साथ कार्य रत है। पतन, दुख, अनीति, अधर्म की हद हो चुकी, पाप के भीषण दावानल से संसार बुरी तरह जल रहा है। अब इसे शीतल करने के लिए सत्य की, प्रेम की, न्याय की गङ्गा प्रकट हुआ ही चाहती है। ईश्वर की इच्छा को कोई टाल नहीं सकता, उसकी प्रेरणा रुक नहीं सकती, भगवान अपनी प्रतिज्ञा से विमुख हो नहीं सकते। जब धर्म की ग्लानि और अधर्म का अभ्युत्थान होता है, तब भगवान उसका समाधान करते ही हैं, अपने प्रिय पुत्रों को असत् के पीड़ाकारक बन्धनों में से छुड़ाकर सत् की सुख शान्तिमयी स्थिति तक पहुँचाता है। अधर्म की अन्तिम घड़ी है, स्वार्थ पाप, और अनीति की हद हो चुकी है भगवान् ऐसी दशा अब और अधिक समय तक नहीं रहने देना चाहते हैं, वे निश्चित रूप से इस दुर्दशा का अन्त करने के लिए तत्पर हुए हैं, ईश्वरीय संकेत के कारण अनेक मार्गों से नवयुग निर्माण का विधान बन रहा है।

ता० १ अगस्त को वह शुभ मुहूर्त हो चुका है, धीरे धीरे सतयुग आगमन का युग निर्माण का महान् कार्य आगे बढ़ता जायगा। दिसम्बर से बड़ा दिन मनाया जाता है, यद्यपि उन दिनों तथा उसके बाद भी एक दो महीने तक छोटे ही दिन दिखाई पड़ते हैं तो भी धीरे धीरे दिन की वृद्धि जारी रहती है और कुछ काल पश्चात् चौदह घण्टे के दिन होने लगते हैं, यही क्रम अच्छा युग आने के सम्बन्ध में है, यद्यपि अभी कई वर्षों तक उपद्रव, अशान्ति, कलह, आतंक, दुख और विनाश का दौर दौरा जारी रहेगा तो भी साथ साथ नव-निर्माण का कार्य जारी रहेगा, पुराने खंडहर को विस्मार करने का कार्य जब समाप्त हो जायगा, तो तीव्र गति से नवीन भवन बनने लगेगा, पूर्णतः परिवर्तन होने में यदि दस बीस वर्ष भी लग जाते हैं तो इनका समय, कार्य की महत्ता को देखते हुए कुछ अधिक नहीं है।

युग परिवर्तन में न तो जमीन बदलती है न आसमान, न मनुष्यों की आकृतियाँ बदलती हैं न सांस जीवन निर्वाह का क्रम नष्ट होता है। संसार का बाह्य सदा ही करीब करीब एक सा रहता है, उसमें थोड़ा बहुत परिवर्तन बहुत समय पीछे हो पाता है, जो लोग ऐसा सोचते हैं कि जादू या तिलस्म की तरह एक दिन में सब चीज़ पलट जाँयेगी और क्षण भर बाद सारी वस्तुएँ दूसरी ही रूप में दिखाई पड़ने लगेंगी, वे युग परिवर्तन के महान् कार्य के जानने में निपट अनाड़ी हैं। सृष्टि क्रम जादूगरी या तिलस्म जैसा नहीं है, वह वैज्ञानिक रूप से नियम पूर्वक बदलता रहता है। युग परिवर्तन में मनुष्यों के हृदय और मस्तिष्क बदलते हैं, विचारों का हेर-फेर होता है, विश्वासों की उलट पलट होती है,

बौद्धिक क्रान्ति के पीछे नवयुग की स्थापना होती चली आती है। ईश्वरीय प्रेरणा लोगोंके अन्तःकरण को जगाती है, वे भीतरी पुकार को सुनकर अपने सड़े गले और अनुपयोगी विचारों की झाड़ बुहार शुरू करते हैं, कूड़ा करकट एक ओर फेंककर सामयिक ईश्वर प्रदत्त नवीन विचारों को मन मन्दिर में स्थान देते हैं, जैसे लोगोंकी कार्यप्रणाली होती है वैसी ही दुनियाँ की विधि व्यवस्था बदल जाती है, जन साधारण के हृदयों में उत्पन्न हुआ विचारों का बीजांकुर जब हरे भरे फल फूल युक्त वृक्ष के रूप से दिखाई देने लगता है तो श्रेष्ठ युग का आनन्दमय दृश्य सामने आजाता है।

सतयुग किस प्रकार आवेगा ? इसका कुछ परिचय पाठक उपरोक्त पंक्तियों में प्राप्त कर चुके हैं। भगवान् सत्यनारायण हर एक मन मन्दिर में अपनी कलाओं को प्रकाशित कर रहे हैं और यह सन्देश दे रहे हैं, कि अब जागना चाहिये, उठना चाहिए, खड़े हो जाना चाहिए, पुरानी धुरानी सड़ी गली व्यवस्थाओं को बदल कर समयोपयोगी विश्वास और विचारों को ग्रहण करना चाहिए, अधर्म को छोड़कर धर्म का पालन करना चाहिये। स्वार्थ, निष्ठुरता, दम्भ, अनीति, अहंकार को छोड़कर प्रेम, सेवा, भलाई, ईमानदारी, परोपकार की ओर चलना चाहिए। जीवन को तामसिकता में से निकाल कर सात्विकता में प्रवृत्त करना चाहिए। सोते हुए अज्ञान ग्रस्त स्वजनों में प्राण फूंक कर उन्हें मृत से जीवित बना देना चाहिए। यह सन्देश कोटि कोटि मनुष्यों के अन्तःकरणों में हलचल मचाये हुए है। हर आदमी जीवन को सफल सार्थक शान्तिमय बनाने की एक अमिट आकांक्षा हृदय में दबाये बैठा है। नई पीढ़ी के होनहार लालों में और पवित्र आत्मा वाले वृद्धों में यह भावना से विशेष प्रबल होरही है, निश्चय समझिये यह ईश्वरीय प्रेरणा है, युग परिवर्तन का यह प्रत्यक्ष लक्षण है

अखण्ड ज्योति के पाठकों को इस ईश्वरीय आज्ञा का पालन करने के लिये यथाशक्ति प्रयत्न करने में आज से ही जुट जाना चाहिए। सच्चिदानन्द प्रभु की भक्ति का इस समय सब से अच्छा मार्ग उनकी आज्ञानुसार कार्य करने में प्रवृत्त होना है। विचार परिवर्तन से युग परिवर्तन होगा। इस लिये उदर पूर्णा के अतिरिक्त जो भी समय एवम् शक्ति बचती है उसे अपने निकटस्थ लोगों के विचार बदलने में लगाना चाहिए। बुराइयों की ओर से जनता का चित्त हटाकर सत्य, प्रेम तथा न्याय की ओर लगाने में किससे जिस प्रकार जो कुछ बन पड़े वह करना चाहिए। स्थान २ पर सद्ग्रन्थों की कथाएं होनी चाहिए, सत्सङ्गों का, स्वाध्याय की, शंका समाधान का, प्रवचन का, विचार विमर्श का, प्रचार का, क्रम जो जिस प्रकार चला सके उसे उसी प्रकार चलाना चाहिये। शरीर से, बुद्धि से, पैसे से पूर्ण रूपेण यह प्रयत्न करना चाहिए, कि निकटस्थ लोगो को मानसिक विकाश बढ़े, आत्मिक प्रकाश फैले, जिससे सन्मार्ग की ओर सब की प्रवृत्ति हो। सतयुगी विचारों की स्थिरता से ही सतयुगी कार्यों की वृद्धि होती है, आज बौद्धिक उलट पलट की आवश्यकता है, सद्भाव और सद विचारों के प्रचार की आवश्यकता है, जिससे आगामी श्रेष्ठ समय को शीघ्र और सुन्दरता पूर्वक निकट लाया जा सके। अखण्ड ज्योति ईश्वर के इसी आदेश को पालन करने में प्राण-प्रण से लगी हुई है। पाठकों को भी कन्धे से कन्धा मिलाकर, उसी मार्ग पर चलकर, प्रभु की इच्छा पूर्ण होने से सहायक बनकर, अपना जीवन सफल बनाना चाहिए।

इस अंक के लेख—

गतमास आचार्य श्रीराम शर्मा लिखित जो नवीन आठ पुस्तकें प्रकाशित हुई हैं उसमें कैसी हृदयस्पर्शी शिक्षा है उसका रसास्वादन कराने के लिये इस अङ्क के सभी लेख उन पुस्तकों में से दिये जा रहे हैं। इस अङ्क के लेखों को पढ़कर पाठक जान सकेंगे कि नई पुस्तकें कितनी महत्त्वपूर्ण हैं। उन्हें मनन पूर्वक पढ़ना जीवनोन्नति के लिये बहुत अधिक सहायक हो सकता है।

अपने पाँवों पर खड़े हूजिए।

(शक्ति संचय के पथ पर)

आप किसी गुत्थी को सुलझाने के लिए दूसरों की सहायता ले सकते हैं पर उनके ऊपर अवलम्बित मत रहिए। अपने पैरों पर खड़े हूजिए और आप अपनी कठिनाइयों को सुलझाने का प्रयत्न कीजिए। जब तक आप दूसरों पर आश्रित रहते हैं, यह समझते हैं कि हमारे कष्टों को कोई और दूर करेगा तब तक बहुत बड़े भ्रम हैं। जो उलझनें आपके सामने हैं उनका दुखदायी रूप अपनी त्रुटियों के कारण हैं, उन त्रुटियों को त्याग कर आप स्वयं ही अपनी उलझनें सुलझा सकते हैं। जब आत्म विश्वास के साथ सुयोग्य मार्ग की तलाश करेंगे तो वह किसी न किसी प्रकार मिलकर ही रहेगा।

बाहर की शक्तियां भी सहायता किया करती हैं, पर करती उन्हीं की हैं जो उनके पात्र हैं। एक मनुष्य सहायता की याचना के लिए जाता है, उधार या मुफ्त कोई वस्तु चाहता है तो उसे आसानी से मिल जाती है, देने वाला विश्वास करता है कि मेरी सहायता का यह सदुपयोग करेगा और तुरन्त ही प्रसन्नता पूर्वक सहायता करने को उद्यत हो जाता है। एक दूसरा व्यक्ति भी सहायता मांगने जाता है पर उसे देने के लिए कोई तैयार नहीं होता, कारण यह नहीं है कि पहले व्यक्ति का भाग्य अच्छा है, दूसरे का खोटा है या सहायता करने वाले दुष्ट हैं वरन् असली कारण यह है कि दूसरा व्यक्ति अपनी योग्यता और ईमानदारी उस प्रकार प्रमाणित नहीं कर सका जैसा कि पहले व्यक्ति ने की थी। सहायता न करने वालों को आपका गालियां देना बेकार है। इस दुनियां में अधिक योग्य को तरज़ीह देने का नियम सदा से चला आता है। किसान निठल्ले पशुओं को कसाई के हाथ बेच देता है और दुधारू तथा काम काजी ढोरों को अच्छी खुराक देकर पालता पोसता है। संसार में सुयोग्य व्यक्तियों को सब प्रकार सहायता मिलती है और अयोग्यों को अपनी मौत मरजाने के लिए छोड़ दिया जाता है। माली अपने बाग में तन्दुरुस्त पौदों की खूब हिफाजत करता है और जो कमजोर होते हैं उन्हें उखाड़ कर उस जगह दूसरा बलवान पौदा लगाता है। ईश्वर की सहायता भी सुयोग्यों को मिलती है, माला जपने और मनौती मनाने पर भी अयोग्य बेचारा वहां से भी निराश लौटता है।

संसार में सफलता लाभ करने की आकांक्षा के साथ अपनी योग्यताओं में वृद्धि करना भी आरम्भ कीजिए। आपका भाग्य किस प्रकार लिखा जाय ? इसका निर्णय करते समय विधाता आपकी आन्तरिक योग्यताओं की परख करता रहता है, उन्नति करने वाले गुणों को यदि अधिक मात्रा में जमाकर लिया गया है तो भाग्य में उन्नति का लेख लिखा जायगा और यदि उन्नायक गुणों को अविकसित पड़ा रहने दिया गया है—दुर्गुणों को, मूर्खताओं को अन्दर भर रखा गया है—तो भाग्य की लिपि दूसरी होगी विधाता लिख देगा कि "इसे तब तक दुख दुर्भाग्यों में ही पड़ा रहना होगा जब तक कि योग्यताओं का सम्पादन न करे।" अपने भाग्य को जैसा चाहें वैसा लिखाना अपने हाथ की बात है। यदि आप आत्म निर्भर हो जावें, जैसा होना चाहते हैं उसके अनुरूप अपनी योग्यताएं बनाने में प्रवृत्त होजावें तो विधाता को विवश होकर आपकी मन मर्जी का भाग्य लिखना पड़ेगा।

'अमरता' पर विश्वास करने के बाद आध्यात्मवाद की दूसरी शिक्षा यह है कि अपने आत्मा को बाह्य परिस्थितियों का निर्माता—केन्द्रबिन्दु—

मानिए। जो घटनाएं सामने आरही हैं, उनकी प्रिय अप्रिय अनुभूति का उत्तरदायित्व अपने ऊपर लीजिए। अपने को जैसा चाहें वैसा बनालेने की योग्यता अपने में समझिए। अपने ऊपर विश्वास कीजिए किसी और का आसरा मत तकिये। बिना आपके निजी प्रयत्न के—योग्यता संपादन के—बाहरी सहायता प्राप्त न होगी, यदि होगी तो उसका लाभ बहुत थोड़े समय में समाप्त होजायगा और पुनः वही दशा आ उपस्थित होगी, जिसकी कि अपनी औकात है। उत्साह, लगन, दृढ़ता, साहस, धैर्य, परिश्रम यह इन छै गुणों को सफलता का अग्रदूत माना गया है। इन दूतों का निवास स्थानआत्म विश्वास में है। अपने ऊपर भरोसा करेंगे तो यह गुण भी उत्पन्न होंगे अन्यथा, किसी देव दानव की कृपा से सट्टा,लाटरी फलजाने, बंभोला की भभूत से छप्पन करोड़ की चौथाई मिलजाने, वैद्यजी की दवादारू खाकर भीमसेन बनजाने, वशीकरण मन्त्र से तरुणी स्त्रियां खिंची चली आने, गंगामैया की कृपा से बेटा होजाने, साईं जी के तावीज से शादी होजाने के स्वप्न देखते रहिए और उम्मीदों की दुनियां में तबियत बहलाते रहिए। बेशऊरों का माल मसखरे उड़ाते हैं, आप भी मसखरों के चंगुल में फँसकर ठगाते रहिए, समय बर्बाद करते रहिए पर प्रयोजन कुछ भी सिद्ध न होगा। ईश्वर के राज्य में ऐसी अन्धी नहीं लड़ रही है कि पसीना बहाने वाले परिश्रमी टापते रहें और शेखचिल्लियों की बन आवे।

"उद्धरेत् आत्मानात्मानम्" की शिक्षा देते हुए गीता ने स्पष्ट कर दिया है कि यदि अपना उत्थान चाहते हो तो उसका प्रयत्न स्वयं करो। दूसरा कोई भी आपकी दशा को सुधार नहीं सकता श्रेष्ठ पुरुषों का थोड़ा सहयोग मिल सकता है पर रास्ता अपने को ही चलना पड़ेगा, यह मंजिल दूसरे के कंधे पर बैठकर पार नहीं की जा सकती।

आत्म सम्मान-धन है।

(प्रतिष्ठा का उच्च सोपान)

आत्म सम्मान को प्राप्त करने और उसकी रक्षा करने के लिए प्राण मण से चेष्टा करते रहिए क्योंकि यह बहुमूल्य सम्पत्ति है। पैसे की तरह यह आँख से दिखाई नहीं पड़ता और पास रखने के लिए तिजोरी की जरूरत नहीं पड़ती तो भी स्पष्टतः यह धन है। हम ऐसे व्यापारियों को जानते है जिनके पास अपनी एक पाई न होने पर भी दूसरों से उधार लेकर बड़े बड़े लम्बे चौड़े व्यापार कर डालते हैं क्यों कि उनका बाजार में सम्मान है, ईमानदारी की प्रतिष्ठा है। हम ऐसे नौकरों को जानते हैं जिन्हें मालिक अपने सगे बेटे की तरह प्राण से प्यारा रखते हैं और उनके लिए प्रत्यक्ष, अप्रत्यक्ष रूप से इतना पैसा खर्च कर देते हैं जो उनके निर्धारित वेतन से अनेक गुना होता है कारण यह कि नौकर के सद्गुणों के कारण मालिक के मन में उसका सम्मान घर कर लेता है। गुरुओं के वचन मानकर श्रद्धालु शिष्य अपना सर्वस्व देने के लिए तत्पर होजाते हैं, अपनी जीवन दिशा बदल देते हैं, प्यारी से प्यारी वस्तु का त्याग कर देते हैं, राज महल छोड़कर भिखारी बन जाते हैं, ऐसा इसलिए होता है कि शिष्य के मन में गुरु के प्रति अगाध सम्मान होता है, गुरु का आत्म सम्मान शिष्य को अपना वशवर्ती बना लेता है। अदालत में किसी एक ही गवाह की गवाही विपक्षी सौ गवाहों की बात को रद्द कर देती है, कारण यह है कि उस गवाह की प्रतिष्ठा न्यायाधीश को प्रभावित कर देती है। आत्म सम्मान ऊँची कोटि का धन है जिसके द्वारा ऐसे महत्व पूर्ण लाभ हो सकते हैं जो कितना ही पैसा खर्च होने पर नहीं होसकते थे।

आत्म सम्मान धन है। बाजार में वह पूंजी की तरह निश्चित फल देने वाला है, समाज में पूजा कराने वाला है, आत्मा को पौष्टिक भोजन देने वाला है परलोक में शाश्वत सुख प्रदान करने वाला है,इसलिए हम कहते हैं कि—हे आध्यात्म वाद का आश्रय लेने वाले शूरवीर साधको! आत्म सम्मान सम्पादित करो और प्रयत्न पूर्वक उसकी रक्षा करो।

ईमानदारी का व्यवहार ।

(प्रतिष्ठा का उच्च सोपान)

—:❀:—

आप जो भी कारोबार करें उसमें ईमानदारी का अधिक से अधिक अंश रखें. इससे अपने सम्मान की वृद्धि होगी और कारोबार खूब चलेगा। उन कमीनी अकल के लोगों को क्या कहा जाय, जो भाट सा मुंह फाड़ कर यह कह दिया करते हैं कि 'व्यापार में बेईमानी बिना काम नहीं चलता, ईमानदारी से रहने में गुजारा नहीं हो सकता।'

जो समझते हैं कि हमने वेईमानी से पैसा कमाया है। वे गलत समझते हैं, असल में उन्होंने ईमानदारी की ओट लेकर ही अनुचित लाभ उठाया होता है। कोई व्यक्ति साफ साफ यह घोषणा करदे कि 'मैं बेईमान हूं और धोखेबाजी का कारोबार करता हूँ' तब फिर अपने व्यापार में लाभ करके दिखावे तो यह समझा जा सकता है कि—हां बेईमानी भी कोई लाभदायक नीति है। यदि ईमानदारी की आड़ लेकर, बार-बार सचाई की दुहाई देकर अनुचित रूप से धन कमा लिया तो वह ईमानदारी को ही निचोड़ लेना हुआ। यह काम तभी तक चलता रह सकता है जब तक कि पर्दा फाश नहीं होता, जिस दिन यह प्रकट हो जायगा कि भलमनसाहत की आड़ में बदमाशी हो रही है उस दिन उस कालनेमी माया का अन्त ही समझिये।

आप टुच्चे मत बनिए, ओछे मत बनिये, कमीने मत बनिए। प्रतिष्ठित हूजिए और अपने लिए प्रतिष्ठा की भावनाऐं फैलने दीजिए। यह सब होना ईमानदारी पर निर्भर है। आप छोटा काम करते हैं कुछ हर्ज नहीं। कम पूंजी का, कम लाभ का, अधिक परिश्रम का, गरीबी सूचक काम काज करने में कोई बुराई नहीं है। जो भी काम आपके हाथ में है उसी में अपना गौरव प्रकट होने दीजिए। यदि आप दुकानदार हैं तो पूरा तोलिये, नियत कीमत रखिए, जो चीज जैसी है उसे वैसी ही कह कर बेचिए। इन तीन नियमों पर अपने काम को अवलम्बित कर दीजिए। मत डरिए कि ऐसा करने से हानि होगी। हम कहते हैं कि कुछ ही दिनों में आपका काम आशातीत उन्नति करने लगेगा। कम तोलकर या कीमत ठहराने में अपना और ग्राहक का बहुत सा समय बर्बाद करके जो लाभ कमाया जाता है असल में वह हानि के बराबर है। कम तोलने में जो जल्दबाजी की जाती है उसे ग्राहक भांप लेता है, बालक और पागल भले ही उस चालाकी को न समझ पावें, समझदार आदमी के मन में उस जल्दबाजी के कारण सन्देह अवश्य उत्पन्न होता है। भले ही वह किसी लज्जा से मुँह से कुछ न कहे पर भीतर ही भीतर गुनगुनाने ज़रूर लगेगा। उस बार तो माल ले जायगा पर दूसरी बार फिर आने में बहुत हिच मिच करेगा। ग्राहक मुँह से चुप है तो यह न समझना चाहिए कि उसका मन भी चुप है। दुकानदार के प्रति ग्राहक के मन में सन्देह उत्पन्न हुआ तो समझ लीजिए कि उसके दुबारा आने की तीन चौथाई आशा चली गई। इसी प्रकार मोल भाव करने में यदि बहुत मगज पच्ची की गई है, पहिली बार मांगे गये दामों को घटाया गया है तो उस समय भले ही वह ग्राहक पट जाय पर मनमें यही धक पक करता रहेगा कि कहीं इसमें भी अधिक दाम तो नहीं चले गये हैं ? ठग तो नहीं लिया गया हूं ? क्योंकि बार बार दामों का घटाया जाना यह साबित करता है कि दुकानदार झूठा और ठग है। ग्राहक सोचता है कि यदि इसकी बात पर विश्वास करके पहली बार मांगे हुए दाम दे दिये होते तो मैं बुरी तरह ठग गया होता। भले ही वह बाजार भाव से कुछ सस्ते दाम पर माल खरीद ले चला हो पर सन्देह यही करता रहेगा कि कहीं इस झूठे आदमी ने इसमें भी तो नहीं

ठग लिया ! ऐसे संकल्प-विकल्प, शंका-सन्देह लेकर जो ग्राहक गया है उसके दुबारा आने की आशा कौन कर सकता है? जिस दुकानदार के स्थायी और विश्वासी ग्राहक नहीं भला उसका काम कितने दिन चल सकता है ? लूट खसोट करना तो चोर डाकुओं का काम है, दुकानदार उस नीति को अपना कर अपना कारोबार को विस्तृत और दृढ़ नहीं बना सकता।

कुछ बताकर कुछ चीज देना एक बड़ा ही लुच्चापन है, जिससे सारी प्रतिष्ठा धूलि में मिल जाती है। दूध में पानी, घी में वेजीटेबिल, अनाज में कंकड़, आटे में मिट्टी मिलाकर देना आज कल खूब चलता है, असली कहकर नकली और खराब चीजें बेची जाती हैं। खाद्य पदार्थों और औषधियों तक की प्रामाणिकता नष्ट होगई है। मनमाने दाम वसूल करना और नकली चीजें देना यह बहुत बड़ी धोखा धड़ी है। अच्छी चीज को ऊँचे दाम परबेचना चाहिये, यह अपटुर झूठा है कि अच्छी चीज महँगे दाम पर न बिकेगी। यदि यह प्रमाणित किया जा सके कि वस्तु असली है तो ग्राहक उसको कुछ अधिक पैसे देकर भी खरीद सकता है। विदेशों में जिन व्यापारियों ने व्यापार का असली मर्म समझा है उन्होंने पूरा तोलने, एक दाम रखने और जो वस्तु जैसी है उसे वैसी ही बताने की अपनी नीति बनाई है और अपने कारोबार को सुविस्तृत कर पर्याप्त लाभ उठाया है। सदियों की पराधीनता ने हमारे चरित्र बल को नष्ट कर डाला है तदनुसार हमारे कारोबार झूठे, नकली, दगाफरेब से भरे हुए होने लगे हैं। लुच्चेपन से न तो बड़े पैमाने पर लाभ ही उठाया जा सकता और न प्रतिष्ठा ही प्राप्त की जा सकती है। व्यापार में धोखेबाजी की नीति बहुत ही बुरी नीति है। इस क्षेत्र में कायरों और कमीने स्वभाव के लोगों के घुस पड़ने के कारण भारतीय उद्योग धन्धे, व्यापार नष्ट होगये। इस देश में प्रचुर परिमाण में शहद उत्पन्न होता है, पर जिसे प्रमाणिक शहद की जरूरत है वह यूरोप और अमेरिका से आया हुआ शहद कैमिस्ट की दुकान से जाकर खरीदेगा। घी इस देश में पर्याप्त मात्रा में उत्पन्न होता है, पर अविश्वास के कारण लोग रूखा सूखा खाना या वेजीटेबल प्रयोग करना पसन्द करते हैं। हमारे व्यापारिक चरित्र का यह कैसा शर्मनाक पतन है।

निजी प्रयत्न का फल

(आत्म गौरव की साधना)

आध्यात्म शास्त्र का यह एक अटल सिद्धान्त है कि जो अपने को जैसा मानता है, उसका बाह्य आवरण भी वैसा ही बनने लगता है। बीज से पौदा उगता है और विचारों से आचरण का निर्माण होता है। जो अपने को दीन, दास, दुखी, दरिद्र मानता है वह वैसा ही बना रहेगा। हमारे देश में दीनता, दासता, दुख, दरिद्रता के विचार फैले और भारतभूमि ठीक वैसी ही बन गई। अपने निवास लोक को जब हम "जननी जन्म भूमिश्च स्वर्गादपि गरीयसी" कहते थे तब यह देव लोक थी, अब 'भव सागर' कहने लगे तो वह बदबू कारागार के रूप में हमारे मौजूद है। यदि आप अपने को नीच पतित मानते हैं तो विश्वास रखिये आप वैसे ही बने रहेंगे कोई भी आपको ऊँचा व पवित्र न बना सकेगा, किन्तु जिस दिन आपके अन्दर से आत्म गौरव की आध्यात्मिक महत्ता की हुंकार उठने लगेगी उसी दिन से आपका जीवन दूसरे ही ढांचे में ढलना शुरू हो जायगा संसार में जितने भी महापुरुष हुए हैं उनमें उनके निजी प्रयत्न का ही श्रेय अधिक है। हम मानते हैं कि दूसरों की सहायता से भी उन्नति होती है पर यह सहायता उन्हें ही प्राप्त होती है। जो अपनी सहायता खुद करते हैं।

दुख में ही सच्चा सुख है।

(ले०—श्री राधाकृष्ण पाठक सुपावली, गवालियर)

हमारे इकलौते पुत्र के ऐसी अवस्था में देहावसान होने पर जब कि आयन्दा कोई आशा नहीं है, चित्त को बड़ी चिन्ता हुई। श्वेत २ केशों को देख इच्छा हुई कि चलो सुख की खोज करें और उसके आश्रित बनें। काश्तकारों, जमींदारों, राजा, रईसों, सेठ, साहूकारों के द्वार २ की धूल खाई, पर प्रत्येक को किसी न किसी वासना में लिप्त होने के कारण सुखी न पाया।

शाम का समय था इसी उथल-पुथल में पड़ा करवटें बदल रहा था, इतने में मेरे एक मित्र पं० तुलसीराम ज्योतिषी जी के पुकारने का शब्द कानों में पड़ा। उठा और उन्हें अन्दर ले गया—ज्योतिषी जी मुझे चिन्ता ग्रसित देख बोले, चलोजी एक महात्मा जी पधारे हैं दर्शन करें, वे सब चिन्ता दूर करेंगे। एक दम शरीर में स्फूर्ति दौड़ गई और चल दिया। दण्डवत् प्रणाम कर दोनों बैठ गये। भला मुझे कब चैन था प्रार्थना की कि भगवन् सुख कहां है, कैसे प्राप्त हो यह सुन महात्मा जी बड़े जोर से कह कहाकर हँस पड़े, फिर मौन हो गये। इस व्यवहार से कुछ बुरा लगा और उठने का विचार करने लगे, परन्तु सत्य है कि 'स्वच्छ आत्मा का आदर्श सर्वत्र प्रकट होता है' महात्मा जी बोले कि भाइयो! आपने वासनाओं की पूर्ति को जो कभी पूरी नहीं होतीं सुख समझ रक्खा है स्मरण रखिये कि इनके पूर्ति होने की इच्छा ही दुख है। यदि आप सुख चाहते हैं तो इन थोथी इच्छाओं के योग्य सामिग्री न खोजें, बल्कि सामिग्री के योग्य इच्छा बनावें नहीं तो सामिग्री स्वरूप इच्छा की पूर्ति न होने पर उसी प्रकार अपमानित होकर दुख उठाना पड़ेगा, जिस प्रकार ५० व्यक्तियों की सामिग्री होने पर १०० व्यक्तियों को निमन्त्रित कर देने वाले को उठाना पड़ता है।

यदि दुख को पाप कर्मों के फल स्वरूप परम पिता परमात्मा का दिया हुआ दण्ड समझते हैं, तो उसमें उस पिता के प्राप्ती का अपूर्व लाभ और पापों के नाश की अमृत बूंटी समझ प्रेम करिये। यदि परमात्मा की ओर से सत्यवादी हरिश्चन्द्र जैसी परीक्षा समझें तो भी सत्य प्रेम और न्याय के साथ कृतज्ञता प्रकट कर स्वागत करिये, खुशी मनाइये, हँसिये और हँसाइये, परन्तु डरिये मत निश्चय रखिये कि 'दुख में सच्चा सुख' जो देवताओं को भी दुर्लभ है मौजूद है।

हैजा से बचिए!

(श्रीगुरुदयालु जी वैद्य, अलीगढ़)

वर्षा ऋतु में जल गदला और पृथ्वी मल संयुक्त हो जाती है। आकाश मेघों से आच्छादित रहता है, वायु तथा प्राणियों के शरीर भी गीले रहते हैं। अतः जठराग्नि मन्द पड़ जाती है। मन्दाग्नि से भोजन नहीं पचता। दाह (जलन) आम, कोष्ठ बद्धता (कब्ज़) अरुचि आदि रोग हो जाते हैं। इसी ऋतु में विसूचिका (हैज़ा Cholera) का क्रूरता है। कभी कभी तो इस हैजे का आक्रमण इतना भयङ्कर तथा प्रकोपमय होता है कि असंख्य जन संख्या का मरण हो जाता है। उपर्युक्त सर्व रोगों में उपयोगी जनता के हितार्थ एक प्रयोग प्रकाशित किये देते हैं। प्रयोग—सौंफ का तेल १० विन्दु, इलायची का तेल ५ बिन्दु. कपूर ६ माशे पीपरमैंट ४ माशे सत अजवायन ५ माशे, लौंग का तेल ८ बिन्दु, सबको शीशी में डाल डाट लगादें, १५ मिनिट में सब तेल रूप हो जावेगा। इसकी ४ बिन्दु रात्रि को सोते समय एक घूंट जल में नित्य सेवन करने से हैजे आदि रोग की आशंका नहीं रहती। हैज़ा होने पर इसी औषधि की ८ बिन्दु तोले अर्क पोदीने में डाल तीन तीन घन्टे के अन्तर से २ घन्टे तक रोगी को पिलाना चाहिये और खाने को कुछ देना चाहिये यदि रोगी की आयु शेष है तो अवश्य बच जावेगा। यह प्रयोग अतीव उत्तम है।

विसूचिका रोगघ्न गुटिका—हींग ३ मा०, काली मिर्च ३ मा०, अफीम शुद्ध ४ रत्ती, कपूर ४ रत्ती, पानी खरल करके २४ गोली बनाली जावें। हैजे वाले रोगी २ घन्टे के अन्तर से १ गोली १ तोले पोदीना के रस देते रहना खाने पीने को कुछ न दिया जावे अवश्य लाभ होगा, अनुभूत है।

चिन्ताओं से घबराइये मत।

[मित्रभाव बढ़ाने की कला]

जीवन को एक प्रकार का खेल समझिए। खिलाड़ी की तरह पार्ट अदा करिए और पल्ला झाड़ कर अलग होजाइए। वैराग्य, निष्काम कर्म अनाशक्ति, की योग शास्त्र में बार बार शिक्षा दी गई है, यह कोई अव्यवहारिक या काल्पनिक विषय नहीं है वरन् कर्म शील मनुष्यों का जीवन मन्त्र है। जिन लोगों पर अत्यन्त कठोर उत्तरदायित्व रहते हैं, जिनके ऊपर असंख्य जनता के भाग्य निर्माण का भार है, उनके सामने पग पग पर बड़े बड़े कठिन, पेचीदा, दुरूह और घबरा देने वाले प्रश्न आते रहते हैं, इतने अधिक और भारी काम सम्मुख उपस्थित रहते हैं जिन्हें देखते ही साधारण मनुष्यों के छक्के छूटते हैं, कठिनाई ऐसी ऐसी भयंकर आती हैं जिनकी पर्वतको उंगली पर उठाने की समता दी जा सकती है। वे कर्मशील उन कठिनाइयों पर बिजय प्राप्त करते हुए अपने महान कार्यों को पूरा करते रहते है।

वर्तमान काल में महायुद्ध अत्यन्त प्रबल बेग से चल रहा है, इसमें युद्ध रत राष्ट्रों के कर्णधारों तथा प्रधान सेनापतियों के ऊपर असाधारण उत्तरदायित्व का भार है। चर्चिल, रूजवेल्ट, चांगकाई शेक, स्टेलिन, हिटलर, टोजो प्रभृति व्यक्तियों को एक साथ कितने कार्य करने पड़ते हैं कितनी पेचीदा गुत्थियां सुलझानी पड़ती हैं, कितने नित नये संघर्षों का सामना करना पड़ता है। वे अपने काम को भली प्रकार करते हैं, न तो बीमार पड़ते हैं; न बेचैन होते हैं; न घबराते हैं। रात को पूरी नींद लेते हैं, आमोदों में भाग लेते हैं, हँसते खेलते हैं, उत्सव भोजों में शरीक होते हैं, यदि मामूली आदमी पर इतना कार्य भार आपड़े तो वह चिन्ता से व्याकुल होकर खाना पीना भूल जायगा, फिक्र के मारे नींद न आवेगी, हँसना बोलना न सूझेगा, चिड़-चिड़ाने लगेगा, सूख २ कर कांटा हो जायगा और संभव है कि थोड़े ही दिनों में मर खप जाय। परन्तु जो लोग कर्मशील हैं एक एक मिनट जिनको मशीन के पुर्जे की तरह काम करते करते हुए बीतती है वे न तो बीमार पड़ते हैं और न कमजोर होते हैं वरन् पहले की अपेक्षा भी अधिक स्वस्थ्य होते चले जाते हैं।

एक हम हैं जो मामूली सी दो चार कठिनाइयां सामने आने पर घबरा जाते हैं, चिन्ता के मारे बेचैन बने रहते हैं। यह मानसिक कमजोरी है आत्मबल का अभाव है, नास्तिकता का चिन्ह है। मानसिक संतुलन खोकर घबराहट में पड़ जाना अपनी शक्तियों को नष्ट भ्रष्ट कर देना है। बेचैन मस्तिष्क ठीक बात सोच नहीं सकता, उसमें उचित मार्ग ढूंढने योग्य क्षमता नहीं रहती, आपत्ति से छुटकारा पाने के उपाय तलाश करने के लिए गम्भीर स्थिर और शान्त चित्त की आवश्यकता है पर उसे पहले ही खो दिया जाय तो जल्दबाजी में सिर्फ ऐसे उथले और अनुचित उपाय सूझ पड़तेहैं जो कठिनाई को और भी अधिक बढ़ाने वाले होते हैं। जाल में फँसा हुआ पक्षी जितना ही फड़फड़ाता है उतना ही और अधिक फँसता जाता है, उसके बंधन उतने ही अधिक कड़े होते जाते हैं।

कार्य की अधिकता, असुविधा या चिन्ता का कारण उपस्थित होने पर आप उसको सुलझाने का प्रयत्न करिए। इनमें सब से प्रथम प्रयत्न यह है कि मानसिक संतुलन को कायम रखिए, चित्त की स्थिरता और धैर्य को नष्ट न होने दीजिए। घबराहट तीन चौथाई शक्ति को बरबाद कर देती है, फिर बिपत्ति से लड़ने के लिए एक चौथाई भाग ही शेष बचता है इतने स्वल्प साधन की सहायता से उस भारी बोझ को उठाना सरल नहीं रहता। कहते हैं कि विपत्ति अकेली नहीं आती, उसके पीछे और भी बहुत से झंझट बँधे चले आते हैं कारण यह है

कि चिन्ता से घबराया हुआ आदमी अपनी मानसिक स्वस्थता खो बैठता है और जल्दबाजी में इस प्रकार का रवैया अख्तियार करता है जिसके कारण दूसरे काम भी बिगड़ते चले जाते हैं तथा एक के बाद दूसरे अनिष्ट उत्पन्न होते जाते हैं। यदि मानसिक स्थिति पर काबू रखा जाय चिन्ता और बेचैनी से घबरा न जाया जाय तो वह मूल कठिनाई भी हल हो सकती है और नई शाखा प्रशाखाओं से भी सुरक्षित रहा जा सकता है।

यह जीवन खेल या नाटक की तरह मनोरंजन का स्थान मानना चाहिए। अपने कर्तव्यका उत्तरदायित्व पूर्ण रूप से अनुभव करिए किन्तु घटनाओं या कार्यों का इतना प्रभाव अपने ऊपर मत पड़ने दीजिए कि चित्त चञ्चल एवं विक्षुब्ध हो उठे, दैनिक कार्य छूट जांय, प्रसन्नता नष्ट हो जाय या नींद में विक्षेप पड़ने लगे। खेल में बार बार जीत होती है, बार बार हारना पड़ता है, कभी आशा का संचार होता है कभी निराशा दिखाई पड़ती है, यह सब होते हुए भी खिलाड़ी खेलता रहता है, उतार चढ़ाव की स्थितियों को देखता है, उसको बर्दाश्त करता है पर इतना प्रभावित नहीं होता कि चिन्ता की शान्ति खो दे, शोक से रोने लगे, चिन्ता से घबरा जावे या हर्ष से नाच उठे। खेल के समय भावों का थोड़ा सा उभाड़ होता है पर घर आते ही खिलाड़ी पल्ला झाड़ कर अलग होता है, उस हार जीत को भूल जाता है और शान्ति पूर्वक चादर तानकर सोता है।

ऐसा ही दृष्टिकोण व्यवहारिक जीवन में रहना चाहिए। ईश्वर की इच्छा, प्रकृति की प्रेरणा, संचित संस्कारों के कर्म फल के अनुसार प्रिय अप्रिय प्रसंग हर किसी के सामने आते हैं, उनका आना रोका नहीं जा सकता, भगवान रामचन्द्र योगेश्वर कृष्ण तक को विपत्तियों से छुटकारा न मिला। होतव्यता कभी कभी ऐसी प्रबल होती है कि प्रयत्न करते हुए भी उनसे बचाव नहीं हो सकता। ऐसे अवसरों पर मूर्ख लोग अपना खून सुखाते हैं, छाती पीटते हैं, रोते झींकते हैं और मर मिटते हैं, बुद्धिमान लोग जीवन की वास्तविक स्थिति पर नवीन विचार धारा से विचार करते हैं, जो होना था हुआ या होना होगा सो होगा, घबराने से कुछ लाभ नहीं वरन् दूनी हानि है, कार्य नष्ट हुआ, साथ ही शरीर भी नष्ट करना, यह कोई समझदारी का काम थोड़े ही है। इसलिए विवेकवान अपने मस्तिष्क पर काबू करते हैं और खिलाड़ी की भाँति बड़ी से बड़ी कठिनाई को छोटी करके देखते हैं। इसका अर्थ उत्तरदायित्व की उपेक्षा करना नहीं वरन यह है कि कठिनाई से पार होने के लिए शक्ति को सुरक्षित रखा जाय, उसका अपव्यय न होने दिया जाय। चिन्ता और शोक की घबराहट में सिवाय बर्बादी के लाभ कुछ नहीं है इसलिए इस मानसिक दुर्बलता को परास्त करने का शक्ति भर प्रयत्न करना चाहिए।

आप संसार के कर्मनिष्ठ महापुरुषों से शिक्षा ग्रहण कीजिए, अपने को धैर्यवान् बनाइए, काम को खेल की तरह करिए, कठिनाइयों को मनोरंजन का एक साधन बना लीजिए। अपने मन के स्वामी आप रहिए, अपने घर पर किसी दूसरे को मालिकी मत गाँठने दीजिए, चिन्ता, शोक आदि शत्रु आपके घर पर कब्जा जमाकर, मस्तिष्क पर अपना काबू करके आपको दीन दरिद्र की भाँति दुखी करना चाहते हैं और शान्ति तथा स्वास्थ का हरण करके व्यथा वेदनाओं की चक्की में पीसना चाहते हैं इनसे सावधान रहिए। यदि शत्रुओं को आपके मस्तिष्क पर कब्जा कर लेने में सफलता मिल गई तो आप कहीं के न रहेंगे। भ्रम और अज्ञान के बन्दीगृह में पड़े पड़े बुरी तरह सड़ते रहेंगे और स्वनिर्मित नरक में अपने आप सुलगाई हुई अग्नि में स्वयमेव जलते रहेंगे, यह बहुत ही भद्दी और दुखदायी स्थिति होगी!

जब कि संसार में अनेक लोग आपसे हजारों गुनी कठिनाइयों का सामना करते हैं अनेक गुना

अनेक परिश्रम करते हैं, अनेक गुने घात प्रतिघातों को सहते हैं फिर भी हँसते रहते हैं और स्वास्थ्य बढ़ाते रहते हैं तो क्या कारण है कि आप जरा सी घर गृहस्थी की समस्या के कारण, थोड़े से नुकसान के कारण, साधारण से कष्ट के कारण इतने घबराते हैं ? भविष्य की काल्पनिक आशंका के कारण बेतरह हड़बड़ाये रहते हैं ? आप अकेले ही इस दुनियाँ में कष्ट प्रसित नहीं हैं लाखों करोड़ो मनुष्य ऐसी ही या इससे भी बड़ी कठिनाइयों का मुकाबिला कर रहे हैं, फिर क्यों नहीं आप उनसे शिक्षा ग्रहण करते ? क्यों नहीं अपने ऊपर काबू रखते ? क्यों नहीं विवेक बुद्धि को जागृत करके हानिप्रद मानसिक कमजोरी को मारकर दूर भगा देते !

दुनियाँ में हर एक के सामने अप्रिय प्रसंग आते हैं ऊँचे चढ़ने वालों के सामने तो वे और भी अधिक संख्या में आते हैं, उनसे घबराने या डरने से कर्मयोग की उपासना नहीं हो सकती । कर्तव्य का पथ संघर्षमय है, उसमें क्षण क्षण पर बाधाऐं आती हैं और उन्हें हटाने के लिए निरन्तर युद्ध करते रहना पड़ता है । आप एक बहादुर सिपाही की तरह विघ्न बाधाओं को कुचलते हुए आगे बढ़ते चलिए, जीवन को खेल समझिए, परिस्थितियों के प्रभाव से मस्तिष्क को बेकाबू मत होने दीजिए, धैर्य रखिए, भली बुरी परिस्थितियों में एक समान हँसते रहिए, मानसिक संतुलन नष्ट मत होने दीजिए, कर्मयोग का आनन्द दायक सूत्र यह है कि-सदा प्रसन्न रहिए और ईश्वर को स्मरण रखिए ।

कार्य को करना ही मनुष्य का कर्त्तव्य है । उसका फल तो यथा योग्य मिल ही जाता है ।

×

आपत्तियों पर जितना ध्यान दिया जायगा । उतनी ही बढ़ती हैं । इन पर ध्यान न देने से वे भी दूर हो जाती है ।

कुछ प्राप्त करने का रहस्य ।

[आध्यात्म धर्म का अवलम्बन]

दूसरों को अपने वश में रखने का यही जादू है, वशीकरण विद्या इससे बढ़कर और कुछ हो नहीं सकती, भलाई, परोपकार, मधुर भाषण, मुसकराहट, नम्रता आदि प्रेममय गुणों को अपनाना, असंख्य लोगों को अपना सच्चा मित्र और भला सहयोगी बनाने का वैज्ञानिक तरीका है । सब कोई जानते हैं कि थैली खरचने से थैला मिलता है, पूंजी लगाने से व्यापारिक लाभ प्राप्त होता है, बीज बोने से खलियान बटोरने का सौभाग्य हाथ आता है, त्याग करना एक प्रकार का आध्यात्मिक व्यापार है जिसका फल इसी लोक में हाथों हाथ मिल जाता है, जो अपने स्वार्थों को दूसरे के हक़ में छोड़ देता है गंभीर परीक्षण करके देखा जाय तो वह घाटे में नहीं रहता, जितना त्याग किया गया है वह किसी न किसी प्रकार से फिर उसके पास वापिस लौट आता है साथ में आश्चर्य जनक ब्याज लाता है सो अलग । अशिक्षित किसान इस ईश्वरीय अटल नियम को भली प्रकार जानता है और विश्वास पूर्वक, बिना किसी को जमानतदार बनाये, खेत में जाकर चुपचाप बीज बो आता है, दूसरे समय दूसरे रूप में उसका त्याग ब्याज समेत उसको मिल जाता है । हम लोग जितने ही अधिक शिक्षित होते जाते हैं, बुद्धिमान बनते जाते हैं उतने ही उन ठोस एवं अटल नियमों से दूर हटते जाते हैं उनको अविश्वास की दृष्टि से देखते जाते हैं । हमें पीछे लौटना होगा, आनन्द की प्राप्ति के लिए जो उलटे प्रयत्न हो रहे हैं उन्हें छोड़ना होगा । वह देखिए अशिक्षित किसान-एक विद्वान प्रोफेसर की भांति हमें अपनी मौन वाणी में कह रहा है कि-"ऐ ! कुछ चाहने इच्छा करने वालो ! त्याग करना सीखो । देने से मिलता है और त्याग करने से प्राप्त होता है ।"

उन्नति की ओर बढ़िए

[आगे बढ़ने की तैयारी]

आप 'उन्नति करना' अपने जीवन का मूल मन्त्र बना लीजिए, ज्ञान को अधिक बढ़ाइए. शरीर को स्वस्थ बलवान और सुन्दर बनाने की दिशा में अधिक प्रगति करते जाइए, प्रतिष्ठावान हूजिए, ऊंचे पद पर चढ़ने का उद्योग कीजिए, मित्र और स्नेहियों की संख्या बढ़ाइए, पुण्य संचय करिए. सद्गुणों से परिपूर्ण हूजिए आत्म बल बढ़ाइए, बुद्धि को तीव्र करिए, अनुभव बढ़ाइए, विवेक को जागृत होने दीजिए। बढ़ना-आगे बढ़ना-और आगे बढ़ना-यात्री का यही कार्य क्रम होना चाहिए।

अपने को असमर्थ, अशक्त एवं असहाय मत समझिए, ऐसे विचारों का परित्याग कर दीजिए कि साधनों के अभाव में हम किस प्रकार आगे बढ़ सकेंगे ? स्मरण रखिए-शक्तिका स्रोत साधनों में नहीं, भवना में है। यदि आपकी आकांक्षाएं आगे बढ़ने के लिए व्यग्र हो रही हैं, उन्नति करने की तीव्र इच्छाऐं बलवती हो रहीं है तो विश्वास रखिए साधन आपको प्राप्त होकर रहेंगे, ईश्वर उन लोगों की पीठ पर अपना वरद हस्त रखता है जो हिम्मत के साथ आगे कदम बढ़ाते हैं। पिता आपकी प्रयत्न शीलता को, बहादुरी की आकांक्षा को पसन्द करता है और वह इच्छा चाहे तामसी ही क्यों न हो बढ़ने में मदद करता है।

प्रकृति विज्ञान के महा पंडित डाक्टर ई० डी० जेम्स ने अनेक तर्क और प्रमाणों से यह सिद्ध किया है कि 'योग्य तम का चुनाव' प्रकृति का नियम है। जो बलवान है उसकी रक्षा के लिए अनेक कमजोरों को वह नष्ट होजाने देता है। आंधी, ओले, तूफान कमजोर पेड़ों को उखाड़ फेंकते है किन्तु बलवान वृक्ष जहाँ के तहाँ दृढ़ता पूर्वक खड़े रहते हैं। बीमारी गरीबी, लड़ाई के संघर्ष में कमजोर पिस जाते हैं, किन्तु बलवान उन आघातों को सहजाते है ; बड़ी मछलीकी जीवन रक्षाके लिए हजारों छोटी मछलियों को प्राण देने पड़ते हैं, बड़े पेड़को खुराक देनेके लिए छोटे पौदों को भूखा मर जाना पड़ता है, एक पशु का पेट भरने के लिए घास पात की असंख्य वनस्पति नष्ट हो जाती हैं, सिंह की जीवन रक्षा के लिए अनेक पशु अपने जीवनका से हाथ धोते हैं। यह कड़ुई सचाई अपने निष्ठुर स्वर में घोषणा करती है कि जीवन एक संघर्ष है इसमें वे ही लोग स्थिर रहेंगे जो अपने को सब दृष्टियों से बलवान बनावेंगे। यह 'वीर भोग्या वसुन्धरा' निर्बलों के लिए नहीं है यह तो पराक्रमियों की क्रीड़ा भूमि है यहां पुरुषार्थियों को विजय माल पहनाई जाती है और निर्बलों को निष्ठुरता पूर्वक निकाल बाहर किया जाता है।

सावधान हूजिए, गफलत को त्याग दीजिए, कहीं ऐसा न हो कि आप शक्ति संपादन की ओर से उपेक्षा करके 'चैन करने' में रस लेने लगें और प्रकृति के निष्ठुर नियम आपको निर्बल पाकर दबोच दें। कहीं ऐसी स्थिति में न पड़ जावें कि निर्बलता, के दंड स्वरूप असह्य वेदनाओं की चक्की में पिसने को विवश होना पड़े। इसलिए पहले से ही सजग रहिए आत्म रक्षा के लिए सावधान हूजिए, जीवन संग्राम में अपने को बरबाद होने से बचने के लिए शक्ति का संपादन कीजिए, बलवान बनिए। सुदृढ़ आधारों पर अपने को खड़ा कीजिए।

आध्यात्मवाद कहता है कि ईश्वर की का आज्ञा पालन यह है कि आप आगे चलें, ऊंचे उठें, आत्म रक्षा के लिए दृढ़ता चाहिए, विपत्ति से बचने के लिए मजबूती चाहिए, भोग ऐश्वर्यों का सुख भोगने के लिए शक्ति चाहिए, परमार्थ प्राप्ति के लिए तेज चाहिए दशों दिशाओं की एक ही पुकार है-आगे बढ़िए, अधिक इकट्ठा कीजिए। ईश्वर को प्राप्त करने की साधना को जारी रखिए, उस महान पथ को पूरा करने की योग्यता बनाये रखने के लिए सांसारिक उन्नतियों को एकत्रित कीजिए स्व, प्रतिष्ठित, शक्तिशाली और वैभववान बनने की दिशा में सदैव प्रगति करते रहिए।

आत्मीयता का विस्तार

[आन्तरिक उल्लास का विकाश]

संसार से ममता को हटालेने या संसार भर में से ममता का विस्तार कर देने का एक ही अर्थ है। दोनों का तात्पर्य यह है कि थोड़े ही दायरे में ममता को केन्द्रीभूत न रहने दिया जाय वरन् उसका उपयोग विस्तृत क्षेत्र में किया जाय। केवल अपने शरीर तक या स्त्री संतान तक ममता सीमित रहना, पाप मूलक है। क्योंकि अन्य लोगों को बिराना समझने से उनका शोषण करने की प्रवृति बलवती होती है। जिससे अपना संबन्ध नहीं उसकी हानि लाभ में भी कोई दिलचस्पी नहीं रहती, ऐसी दशा में अपनों के लाभ के लिए बिरानों को हानि पहुंचाने का अवसर आवे तो उसे करने में कुछ झिझक या संकोच अनुभव नहीं होता। चोर यदि यह अनुभव करे कि जिसका माल चुरा रहा हूं उसे जितना दुख चोरी में मुझे होता है उतनाही दुख उसे होगा तो वह चोरी कैसे कर सकेगा? हत्यारा-यदि अनुभव करे कि बध करते समय मुझे जितना कष्ट होता है उतना ही उसे भी होगा तो उसकी छुरी कैसे किसीका गला कतरने में समर्थ होगी? आत्मीयता का अभाव ही सताने और शोषण करने की की छूट देता है—अपनों के लिए तो त्याग और सेवा करने की इच्छा होगी। अपनी बीमारी को दूर करने के लिए मनमाना पैसा खर्च किया जा सकता है, यदि भाई को अपना मानते हैं तो उसकी बीमारी में भी सहायता किये बिना न रहा जायगा इस प्रकार पाप और पुण्य की प्रवृत्तियां भी इसी अहंता को सकोड़ने और विस्तार करने पर निर्भर हैं। आप सदैव यही उद्योग करते रहिए कि अपना 'अहम्' सीमित न रहे, वरन् जितना हो सके विस्तृत किया जाय।

आत्मभाव के विस्तार की सूक्ष्म मनोवृत्ति का व्यवहारत: उदारता में दर्शन किया जा सकता है। जिनके विचार और कार्य उदारता पूर्ण हैं,जो दूसरे लोगों की सुविधा का अधिक ध्यान रखते हैं वास्तव में वे इस भूलोक के देवता हैं। अभागा कंजूस सोचता है कि सारी दौलत अपने लिए जोड़ २ कर रखलूँ, अपनी विद्या किसी पर प्रकट न करूँ, अपनी शक्तियों को किसी को मुफ्त न दूँ, ऐसे लोग सर्प बनकर सम्पदाओं की चौकी दारी करते हुए मर जाते हैं, उन्हें वह आनन्द जीवन भर उपलब्ध नहीं होता जो उदारता के द्वारा मिलता है। एक उदार हृदय व्यक्ति पड़ोसी के बच्चों को खिलाकर बिना खर्च के उतना ही आनन्द प्राप्त कर लेता है जितना कि बहुत खर्च और कष्ट के साथ अपने बालकों को खिलाने में प्राप्त किया जाता। अपने हँसते हुए बालक को देखकर आपकी छाती गुदगुदाने लगती है,फिर पड़ोसी के उससे भी सुन्दर फूल से हंसते हुए बालक को देखकर आपके दिल की कली क्यों नहीं खिलती? अपनी फुलवारीको देखकर खुश होतेहैं पर पास में ही दूसरों के जो सुरभित उद्यान लहलहा रहे हैं वे आपमें तरंगें क्यों नहीं उत्पन्न करते? आपके आस पास अनेक सदाचारी, कर्तव्य-परायण, मधुर स्वभाव वाले, धर्मात्मा, परोपकारी, विद्वान निवास कर रहे हैं, उनका होना आपको क्यों शान्तिदायी नहीं होता? कारण यह कि आप खुद अपने हाथों अपनी एक निजी अलग दुनियाँ बसाना चाहते हैं, उसी से सम्बन्ध रखना चाहते हैं, उसी की उन्नति को देख कर प्रसन्न होना चाहते हैं, यह काम शैतान का है शैतानी कार्य आनन्ददायी नहीं हो सकते।

अष्ट सिद्धि नव निद्धि

(ब्रह्म विद्या का रहस्योद्घाटन)

हवा में उड़जाना, पानी में चलना, शरीर को अदृश्य या छोटा बड़ा बना लेना, इस प्रकार की सिद्धियों का वर्णन किन्हीं २ पुस्तकों में मिलता है पर आज उनका परिचय नहीं मिलता। हम ऐसे सिद्धों की तलाश में दुरूह वन पर्वतों में मुद्दतों तक भ्रमण करते रहे हैं, भारतवर्ष के कौने कौने की खाक छानी है, अनेक गुप्त-प्रकट, अज्ञात-बहु विख्यात योगियों से हम घनिष्टता पूर्वक मिले हैं और उनकी तह तक पहुँचने का शक्ति भर प्रयत्न किया है, २० वर्षों की निरन्तर खोज में किम्वदन्तियाँ तो अनेक सुनीं पर ऐसे किसी सिद्ध पुरुष का साक्षात् न हो पाया, जो सचमुच उपरोक्त प्रकार की हवा में उड़ने आदि की सिद्धियों से युक्त हो। जैसे गृहस्थ बाजीगर अपनी चतुरता हस्तकौशल, कूट क्रिया द्वारा आश्चर्य जनक करतब दिखाते हैं वैसे ही चमत्कार दिखाते हुए हमने बहु विख्यात सिद्धों को पाया है। बहुत काल तक उनकी लंगोटी धोकर जब उनकी घनिष्टता प्राप्त की तो जाना कि असल में सच्ची सिद्धि उनके पास कुछ भी नहीं है, कूट क्रियाओं द्वारा लोगों को अपने चंगुल में फँसा लेने मात्र की कला में वे प्रवीण हैं। ऐसी दशामें इस सम्बन्ध में पाठकों से निश्चित रूप से हम कुछ कह नहीं सकते। यह पुस्तकें हमने भी अनुभव के आधार पर लिखी हैं, जिस बात का हम स्वयं अनुभव न करलें उसके सम्बन्धमें पाठकों को कुछ विश्वास करने के लिए हम नहीं कह सकते। संभव है किसी पुस्तक में अतिशयोक्ति के साथ ऐसी सिद्धियों का होना लिख दिया हो, संभव है कोई स्वतन्त्र विज्ञान उन सिद्धियों को प्राप्त करने का रहा हो जो अब लुप्त होगया हो, संभव है ऐसी सिद्धियों वाले कहीं कोई अप्रकट योगी छिपे पड़े हों और संसार अभी तक उन्हें जान न सका हो। अज्ञात और अप्रत्यक्ष बातों के संबन्ध में चाहे जैसे अनुमान लगाये जा सकते हैं, पर जब तक कुछ प्रत्यक्ष अनुभव न हो, निश्चित रूप से कहना संभव नहीं। इस लिये पातञ्जलि योग दर्शन में जिन सिद्धियों का वर्णन है, उनके बारे में हम अपना कुछ निश्चित मत पाठकों के सामने प्रकट नहीं कर सकते।

आत्मिक बल बढ़ने से कई प्रकार की शक्तियां प्राप्त होती हैं जिन्हें हर कोई प्रत्यक्ष अनुभव कर सकता है। १—जिसकी दिलचस्पी आत्मिक क्षेत्र में होती है वह आत्मा को शरीर से भिन्न समझता है और सांसारिक पदार्थों की नश्वरताको भली भांति समझता है, इस लिए थोड़ी वस्तुएँ प्राप्त होने पर भी बिना कुड़कुड़ाये काम चला लेता है और वियोग, हानि, नाश आदि के कारण दुखी नहीं होता तीन चौथाई दुख मानसिक होता है, इनसे उसे सहजही छुटकारा मिल जाता है। लोग दुःख निवारण के लिए सारा जीवन खपा देते हैं फिर भी सन्तोष की स्थिति प्राप्त नहीं होती किन्तु आत्म ज्ञान से अनायास ही उसकी प्राप्ति हो जाती है यह पहली सिद्धि है। २—आत्म भाव, प्रेम, सद्भाव ईमानदारी, सेवा, सहायता की बुद्धि जागृत होने से अपना व्यवहार दूसरों के साथ बहुत ही उदार, विनम्र और मधुर होने लगता है फल स्वरूप दूसरों का व्यवहार भी अपने साथ वैसा ही मधुर-सहायता पूर्ण एवं सरस होता है। मित्रों, प्रेमियों, हितचिन्तकों और प्रशंसकों की संख्या बढ़ने से मन, प्रसन्नता और प्रफुल्लता से भरा रहता है यह दूसरी सिद्धि है। ३—आत्म निरीक्षण द्वारा कुवृत्तियों की पहचान कर उनसे बचने का प्रयत्न करते रहने से मानसिक शांति बनी रहती है, पापों की बढ़ोत्तरी नहीं होती, चित्त की शुद्धि होने से अन्तःकरण हलका हलका रहता है और नाना प्रकार के मानसिक विक्षेप उठकर घबराहट बेचैनी उत्पन्न नहीं करते यह तीसरी सिद्धि है। ४—चित्त की स्थिरता का शरीर पर अच्छा प्रभाव पड़ता है, इन्द्रिय संयम और शांत मस्तिष्क के कारण शरीर निरोग और दीर्घजीवी रहता है यह चौथी सिद्धि है। ५—सात्विक वृत्तियों के बढ़ने से धैर्य, साहस, स्थिरता, दृढ़ता, परिश्रम-शीलता की वृद्धि होती है, इन से असंख्य प्रकार की योग्यताएँ बढ़ती हैं और कठिन काम आसान हो जाते हैं यह पाँचवीं सिद्धि है। ६—

मनुष्यता की मात्रा बढ़ जाने से सब लोग उसका विश्वास करते हैं, विश्वासी के पथ प्रदर्शन, नेतृत्व और कार्य क्रम को लोग अपनाते हैं, उसके व्यक्तित्व की अमानत पर बड़ी से बड़ी जोखिम उठाने और त्याग करने को लोग तैयार होजाते हैं, बिना राज्य शासन करना छटवीं सिद्धि है। ७—बुद्धि परमार्जित होने के कारण दूसरों की मनोदशा समझने की योग्यता हो जाती है, निर्मल बुद्धि पर स्वच्छ दर्पण की तरह दूसरों के मन का चित्र स्पष्ट रूप से आ जाता है। अन्य व्यक्तियों के मनोगत भावों को समझकर उनके साथ तदनुकूल व्यवहार करने से अपनी कार्य पद्धति सफल, लाभदायक एवं हितकर होती है, यह सातवीं सिद्धि है। ८—आत्मा की पवित्रता के कारण जीवन मुक्ति मिलती है, ईश्वर प्राप्ति होती है, सत् चित आनन्द पूर्ण स्थिति में निवास होता है, स्वर्ग और पुनर्जन्म मुट्ठी में रहते हैं यह आठवीं सिद्धि है। इन अष्ट सिद्धियों को आध्यात्म पथ के साधक अपनी साधना के अनुसार न्यूनाधिक मात्रा में प्राप्त करते हैं, जिस सुख की तलाश में बहिर्मुखी व्यक्ति घोर प्रयत्न करते हुए मारे मारे फिरते हैं फिर भी निराश रहते हैं उससे कई गुना सुख आध्यात्म साधक अनायास ही पा जाते हैं। अष्ट सिद्धि के प्रभाव से उनका जीवन हर घड़ी आनन्द से परिपूर्ण रहता है, दुख की छाया भी पास में नहीं फटकने पाती।

नव सिद्धियां दूसरों के ऊपर प्रभाव करने के लिये हैं। पहलवान शारीरिक बल को बढ़ाकर स्वास्थ्य जन्य सुख भोगता है, साथ ही उस बल के प्रभाव से दूसरों को हानि लाभ पहुँचाता है इसी प्रकार आत्मिक पहलवानों की ऋद्धियां सिद्धियां हैं। सिद्धियों के बल से अपने आप को उन्नत, पवित्र, शांत, निर्भय एवं आनन्दित बनाता है और ऋद्धियों के बल से दूसरों को हानि लाभ पहुँचाता है। नौ ऋद्धियां निम्न प्रकार हैं—

१—आत्म बल के साथ जो भावना दूसरे पर फेंकी जाती है वह बाण के समान शक्ति शाली होती है। उनके आशीर्वाद एवं श्राप दोनों ही फल प्रद होते हैं। श्राप और वरदान की प्राचीन गाथाऐं झूंठी नहीं हैं, तपस्वी पुरुष सच्चे हृदय से किसी को आशीर्वाद दें तो वह व्यक्ति लाभान्वित हो सकता है और श्राप से आपत्ति में पड़ सकता है यह प्रथम ऋद्धि है। २—तपस्वी पुरुषों की मामूली चिकित्सा से असाध्य और कष्ट साध्य रोग दूर हो सकते हैं उनकी चिकित्सा में आध्यात्मिक अमृत मिला होने के कारण ऊंचे चिकित्सकों की अपेक्षा भी वे अधिक लाभ पहुँचा सकते हैं यह दूसरी ऋद्धि है। ३—साधकों के आस पास का वातावरण ऐसा विचित्र एवम् प्रभावशाली होता है कि उसमें रहने से लोगों में असाधारण परिवर्तन हो जाता है। बुरे और ढीले स्वभाव के व्यक्ति साधु पुरुषों की संगति में रहकर बहुत कुछ बदल जाते हैं उनकी शारीरिक और मानसिक बिजली इतनी तेज होती है कि पास आने वाले व्यक्ति को अपने रङ्ग में रँगे बिना अछूता नहीं छोड़ती यह तीसरी ऋद्धि है। ४—मैस्मरेजम हिप्नोटिज्म, परकाया प्रवेश आदि तरीकों से वे निकटस्थ या दूर के मनुष्यों को संमोहित करके उसके अन्दर से मानसिक दोषों को हटा सकते हैं और उसके स्थान पर सद्गुणों के बीज अन्तर्मन में जमा सकते हैं यह चौथी ऋद्धि है। ५—पूर्व कर्मों के फल स्वरूप जिस प्रकार का भविष्य बन रहा है उसको पहले से ही देख सकते हैं यह पाँचवी ऋद्धि है। ६—भूतकाल की घटनाऐं और विचार धाराऐं नष्ट नहीं हो जाती वरन् ईश्वर तत्व में अङ्कित रहती हैं आध्यात्म साधक किसी व्यक्ति का भूतकाल अपनी दिव्य दृष्टि से देख सकता है और बिना पूछे किसी व्यक्ति का परिचय जान सकता है यह छटवीं ऋद्धि है। ७—योग साधक अपनी शक्ति, पुण्य, तपस्या, आयु, योग्यता का कुछ अंश दूसरों को दान कर सकता है तथा किसी के पाप और कष्टों को स्वयं भुगतने के लिये आत्म बल से अपने ऊपर ले सकता है यह सातवीं ऋद्धि है। ८—आत्म शक्ति से युक्त अपनी विचार धाराओं को अदृश्य रूप से ऐसे प्रचण्ड प्रभाव के साथ बहा सकता है कि असंख्य जनता को उन विचारों के सामने झुकना पड़े, आपने देखा होगा कि बक्की उपदेशक इधर उधर कतरनी सी जीभ चलाते फिरते हैं पर उनका कुछ भी प्रभाव नहीं

होता, किन्तु सच्चे महा पुरुष थोड़ा कहते हैं तो भी उनके प्रचण्ड विचार बड़े २ कठोर हृदयों में पार हो जाते हैं उनका ऐसा तीव्र प्रभाव होता है कि उपेक्षा करना कठिन हो जाता है, आत्म शक्ति युक्त महापुरुष अपने मनोबल से जनता के विचार पलट सकते हैं युगान्तर उपस्थित कर सकते हैं यह आठवीं ऋद्धि है [९] निराशों को आशान्वित. आलसियों को उद्यमी. मूर्खों को पण्डित. रोने वालों को आनन्दित. पापियों को पुण्यात्मा. दरिद्रों को ऐश्वर्यवान. अभावग्रस्तों को वैभवशाली बना देना. सोते हुओं को जगा देना, नर को नारायण के रूप में परिवर्तित कर देना. अर्ध मृतकों में प्राण फूंक कर सजीव कर देना यह नववीं ऋद्धि है।

अष्ट सिद्धि नव ऋद्धि से स्वभावतः योगी लोग सम्पन्न होते हैं. जिसकी जितनी जैसी साधना है उसे उसी मात्रा में ऋद्धि सिद्धियां प्राप्त होती हैं। इनका दुरुपयोग करना बुरा है. सदुपयोग करने से आत्मिक बल वृद्धि होती है। जहां ऋद्धि सिद्धियों से बचने के लिए कहा गया है वहां उसका तात्पर्य इनका दुरुपयोग न करने से है अथवा कौतूहल पूर्ण बाजीगरी के निरर्थक खेलों में रुचि न लेने से है। योगी को स्वभावतः ऋद्धि सिद्धियाँ मिलती हैं यह प्राकृतिक क्रम है।

सात्विक सहायताएं।

इस मास ज्ञान यज्ञ की सहायता के लिए निम्न महानुभावों ने अपनी धर्म उपार्जित कमाई में से यह सहायताएं भेजी हैं. अखण्ड-ज्योति इन महानुभावों के प्रति अपनी आन्तरिक कृतज्ञता प्रकट करती है।

२) श्री० खिमजी भाई, पौनी।
२) श्री० कालीप्रसाद जी अग्रवाल अरंग।
२) श्री० सुशीलचन्द्र गुप्ता. शाहाबाद।
१) श्री० रामकृष्ण पाठक. सुपारली।
२) श्री० तपेशचन्द्र जैन. बिजनौर।
१।/=) श्री० गोपाल जी माहेश्वरी-मोरेना।
१) श्री० ललितप्रसाद गर्ग सन्खवा।
१) श्री लक्ष्मण मामा साहेब व्यास सेन्धवा।
१।।/=) धर्मपालसिंह जी रुड़की।

निष्काम कर्म योग

[ब्रह्म विद्या का रहस्योद्घाटन]

यदि कर्म करते समय फल से मिलने वाले सुख का काल्पनिक महल न खड़ा किया जाय तो उसमें संयोगवश असफलता होजाय तो भी दुख नहीं होता। इसलिए भगवान् कृष्ण ने निष्काम कर्म को 'योग' कहा है, यही कर्म का कुशलता है। पुत्र पालन को अपना पुनीत कर्तव्य समझा जाय, एक प्राणी की निस्वार्थ सेवा का भाव रखा जाय. हमारे माता पिता ने जैसे हमें पाल पोस कर बड़ा किया था वैसे ही एक प्राणी स्नेह सेवा करके कर्ज अदा करने का भाव रखा जाय, ईश्वर की दी हुई अमानत को ब्याज समेत उसे वापिस देने का स्मरण रखा जाय, तो वह पुत्र पालन ही यज्ञ के समान पुण्य फल का देने वाला हो सकता है। पालन के समय जो त्याग, सेवा, कष्ट सहन. तप, करना पड़ता है उसमें पल पल पर आन्तरिक आनंद और संतोष मिलता है, प्रसन्नता बढ़ती है और आत्म बल की उन्नति होती चलती है। दो आदमी अपने अपने पुत्र का पालन करते हैं एक फल की आशा से पच्चीस वर्ष प्रतीक्षा करता है और यदि परिणाम वैसा न निकला तो दुख से छाती पीटता है, दूसरा आदमी आशाओं के वैसे महल नहीं बनाता, वरन् वर्तमान समय में जो त्याग, स्नेह और सेवा पूर्वक एक प्राणी का पालन कर रहा है उसे धर्म समझ कर अपनी धर्मपरायणता पर संतोष करता है उसके लिये हर घड़ी आनन्द ही आनन्द है। पहला आदमी जब कि पच्चीस वर्ष आशा लगाये बैठा रहा तब तक दूसरे आदमी ने अपनी कर्तव्य परायणता का इतना आनन्द लूट लिया जो बेटे की कमाई खाने की अपेक्षा हजारों गुना अधिक था। यदि पुत्र, इच्छा के प्रतिकूल निकलता है या मर जाता है तो फल की आशा वाले को दुख होगा, परन्तु सेवा भावी के लिए वैसी कोई बात नहीं है, उसने ममता की उपासना नहीं की है इसलिए हानि का दुख भी क्यों होगा ? ममता ही की दुख जननी है, निस्वार्थ को शोक संताप हो नहीं सकता।

विनाश का आराधन

(लेखक—श्री दिनकर प्रसाद शुक्ल विशारद, गोहद)

अल्हड़ यौवन ! भोले मानव ! तेरे विकास के कितने क्षण !

(१)

तेरे प्रतिभा-प्रकाश में रे,
ध्वन्यात्मक उरोल्लास में रे,
अवनत मुख अन्तर जगत झांक—
है तेरे उर तम का क्रन्दन !
तेरे विकास के कितने क्षण !!

(२)

ऊषा का मदिराधर-विलास,
प्रियतम का पावन-प्रणय पाश,
है करुणा वसना रजनी के—
बिखरे यौवन का चित्राङ्कण !
तेरे विकास के कितने क्षण !

(३)

विद्युत का घोर सघन सवेश,
रह रह नभ का उल्कोन्मेष,
वारिद की तिमिराच्छन्न क्षीण—
रेखाओं का है सभी करण !
तेरे विकास के कितने क्षण !

(४)

यह प्रकृति नटी का अमिट नाट्य,
यह अभिनय अभिनव तर अकाट्य,
प्रलयान्धकार की रङ्ग भूमि—
का है पैशाचिक दिग्दर्शन !
तेरे विकास के कितने क्षण !

(५)

यह तेरा वैभव उदधि लुब्ध,
कल्लोल-विक्रीड़ित-स्वर अक्षुब्ध,
है उजड़ी सैकत चाहों का—
आहों से उर्वर उत्पीड़न !
तेरे विकास के कितने क्षण !

(६)

तेरे हर्षों का रव अपार,
है शत शत उर का चीत्कार,
तेरे विराम की आशायें—
हैं अगणित अधरों के स्पन्दन !
तेरे विकास के कितने क्षण !

(७)

यह प्रस्तर खण्डों का सञ्चय,
मुक्ता, मणि, लुटा लुटा निर्दय,
अभिमानी ! रजत-भ्रान्ति-रञ्जित,
भू-रज-का क्यों यह संरक्षण !
तेरे विकास के कितने क्षण !

(८)

मानवता वक्षोपरि दानव,
रच उठा आज भीषण ताण्डव,
हैं ये अतृप्त इच्छायें ही—
तेरे विनाश का आराधन !
तेरे विकास के कितने क्षण !

प्रकाशक—श्रीराम शर्मा "अखण्ड-ज्योति" कार्यालय, मथुरा।
मुद्रक—पं० पुरुषोत्तमदास मुरलीधर शर्मा, हरीहर इलेक्टिक मशीन प्रेस. मथुरा।